जनसत्ता

सत्ता और सवाल

महाराष्ट्र में नई सरकार के गठन को लेकर दो हफ्ते से जिस तरह का गतिरोध चल रहा है, वह लोकतंत्र व्यवस्था के लिए किसी आघात से कम नहीं है। चुनाव नतीजे आने के बाद भी सरकार का गठन नहीं हो पाना हैरान करने वाला घटनाक्रम है। ढाई-ढाई साल मुख्यमंत्री रहने को लेकर भारतीय जनता पार्टी और शिवसेना जिस तरह से अपने-अपने रुख पर अड़ गए हैं, उससे यह तो साफ है कि जो दल अभी से ही इतने गंभीर विवाद में उलझ गए हैं, अगर वे सरकार बना भी लेते हैं तब भी क्या तो वे सरकार चलाएंगे और किस तरह का प्रशासन लोगों को देंगे। निर्वाचित सरकार का दायित्व जनता की सेवा करना है, उसके लिए कल्याण योजनाएं चलाना है, लेकिन जो दल सरकार बनाने के मुद्दे पर किसी सहमति पर नहीं पहुंच पा रहे हैं, उनसे ये उम्मीदें करना व्यर्थ ही है। महाराष्ट्र में विधानसभा के लिए 21 अक्तूबर को वोट पड़े थे और 24 अक्तूबर को नतीजे आए थे। उसके बाद से ही राज्य की जनता नई सरकार की उम्मीदें लगाए बैठी है, लेकिन मौजूदा हालात बता रहे हैं कि नई सरकार बनने के फिलहाल कोई आसार नहीं है और राज्य एक बार फिर से राष्ट्रपति शासन देखने को मजबूर हो सकता है। सवाल है कि जिन दलों को जनता ने सरकार बनाने के लिए जनादेश दिया है, वे आखिर क्यों अपनी जिद पर अड़े हुए हैं? क्या इसे मतदाताओं के साथ विश्वासघात नहीं माना जाना चाहिए?

विवाद का केंद्र बिंदु इसी बात को लेकर है कि ढाई साल भाजपा राज करे और बाकी के अगले ढाई साल शिवसेना। लेकिन भाजपा ने इससे साफ इनकार कर दिया है, जबकि शिवसेना इससे कम पर मानने को तैयार नहीं है। दोनों ने साथ मिल कर चुनाव लड़ा, इसलिए सरकार भी इस महायुति की ही बननी है। पर बने कैसे, यह दोनों दलों के लिए नाक का सवाल बन गया है। न तो भाजपा झुकने को तैयार है, न ही शिवसेना टस से मस हो रही है। शिवसेना का कहना है कि सहमति यही बनी थी कि दोनों दलों से ढाई-ढाई साल का मुख्यमंत्री बनेगा। पर भाजपा इसे झूठ करार दे रही है कि ऐसी कोई सहमति बनी थी। ऐसे में कौन सच बोल रहा है, कौन झूठ, तय कर पाना आसान नहीं है। शिवसेना का तर्क है कि वह जितनी सीटों पर लड़ी है और जितने उम्मीदवार उसके जीते हैं उसके हिसाब से उसकी शक्ति भाजपा से कहीं कम नहीं है और ऐसे में सत्ता में बराबर की भागीदारी का उसका हक बनता है। सत्ता के लिए राजनीतिक दल किस सीमा तक जा सकते हैं और किस स्तर तक गिर सकते हैं, इसे लेकर लोगों में जो धारणा बन रही है, वह गंभीर विषय है।

इस वक्त जो हालात हैं, उसमें राष्ट्रपति शासन ही एकमात्र विकल्प बचता है। अगर ऐसा होता है तो महाराष्ट्र के इतिहास में यह तीसरा मौका होगा जब वहां राष्ट्रपति राज होगा। राज्यपाल तमाम कानूनी पहलुओं और विकल्पों पर विचार कर रहे हैं, लेकिन कोई भी प्रयास कामयाब नहीं हो नहीं रहा। इस बीच शिवसेना ने अपने विधायकों को एक होटल में रख दिया है ताकि कोई भी विधायक किसी दूसरे दल का हाथ न थाम ले। इससे विधायकों की खरीद-फरोख्त की आशंकाओं को भी बल मिलता है। ये सब घटनाएं बता रही हैं कि राज्य राजनीतिक अनिश्चितता के भंवर में फंस चुका है। ऐसे में जनता अपने को ठगा-सा महसूस कर रही है।

दोमुंहा रुख

हालांकि भारत से संबंधित लगभग सभी मामलों में पाकिस्तान का रुख शायद ही कभी ऐसा रहा, जिस पर भरोसा किया जा सके, लेकिन करतारपुर गलियारे का समूचा संदर्भ जिस भावना से जुड़ा है, उसमें उम्मीद की गई थी कि उसकी ओर से ऐसा कुछ न हो जो सुधरने वाले माहौल को बाधित कर दे। खासतौर पर आज करतारपुर गलियारे की शुरुआत होने के ठीक पहले जो बातें सामने आ रही हैं, वे कतई इस बात की पुष्टि नहीं करतीं कि पाकिस्तान इस मौके को संबंध सुधार का कोई जरिया बनाना चाहता। वरना यह कैसे मुमकिन है कि एक ओर पाकिस्तान के प्रधानमंत्री का बयान आता है कि करतारपुर में दरबार साहिब की यात्रा करने वाले तीर्थयात्रियों को पासपोर्ट की जरूरत नहीं होगी, केवल वैध पहचान-पत्र ही काफी होगा, तो अगले ही दिन उसकी सेना की ओर से कहा जाता है कि श्रद्धालुओं के लिए पासपोर्ट जरूरी होगा। क्या इसे पाकिस्तान के अपने वादे से मुकरने के तौर पर देखा जाए या फिर यह एक गंभीर स्थिति का संकेत है कि वहां सरकार के नुमाइंदों और सेना के बीच अंतरराष्ट्रीय मसलों पर भी कोई तालमेल नहीं है!

एक देश के नागरिकों का दूसरे देश की सीमा में प्रवेश का एक कायदा है और वह सख्त नियमों में बंधा होता है। भारत-पाकिस्तान के बीच फिलहाल यह व्यवस्था है कि दोनों देशों के नागरिकों के सीमापार जाने के लिए लिए पासपोर्ट और वीजा अनिवार्य है। करतारपुर में दरबार साहिब की यात्रा के लिए इस बात पर सहमति बनी थी कि वहां जाने वाले श्रद्धालुओं के लिए फिलहाल वीजा की जरूरत नहीं होगी। लेकिन पासपोर्ट को लेकर स्थिति स्पष्ट थी और उस पर एकतरफा तरीके से फैसला नहीं लिया जा सकता था। हैरानी की बात यह है कि इसके बावजूद पाकिस्तान के प्रधानमंत्री ने ट्विटर पर यह घोषणा कर दी कि करतारपुर आने वाले श्रद्धालुओं के लिए पासपोर्ट की बाध्यता नहीं होगी। हो सकता है कि यह दिखावा ही सही, सद्भावना के लिहाज से की गई घोषणा हो, लेकिन इसके पहले यह सुनिश्चित कर लिया जाना चाहिए था कि इस मसले पर सेना और सरकार के बीच पूरी सहमति हो और किसी घोषणा से पहले पर्याप्त तालमेल कायम हो जाए। ऐसा नहीं होने की वजह से ही अब पाकिस्तान की सरकार के सामने एक असुविधाजनक और असहज स्थिति आ खड़ी हुई कि पासपोर्ट को लेकर वह अपनी पूर्व घोषणा का क्या करे! जाहिर है, ऐसी स्थिति में अंतिम तौर पर समझौते की शर्तें ही लागू होंगी और एक तरह से यह पाकिस्तान सरकार के अपनी घोषणा से मुकरने के तौर पर देखा जाएगा।

विडंबना यह है कि करतारपुर गलियारे से सिख श्रद्धालुओं को दरबार साहिब जाने की सुविधा मुहैया कराने का श्रेय लेकर पाकिस्तान जहां खुद को एक उदार देश के रूप में दुनिया के सामने पेश करना चाहता है, वहीं उसकी कोशिश शायद यह भी है कि इसी को मौका बना कर अपनी राजनीति भी साध ली जाए। मगर दो दिन पहले करतारपुर आने के लिए तैयार किए गए एक प्रचार-गीत में कुछ खालिस्तानी अलगाववादी रहे लोगों की तस्वीरें दिखाई गई या फिर अब झूठ पर आधारित कई बातें प्रचारित की जा रही हैं, उससे साफ है कि वह करतापुर गलियारे के बहाने अपनी मनमानी चलाने की फिराक में है। पिछले कुछ दिनों के दौरान पाकिस्तान की ओर से जिस तरह के बयान सामने आए हैं, ऐसा लगता है कि उसके पीछे कोई सुविचारित योजना नहीं है। जबकि उसे इस बात का खयाल रखना चाहिए कि उसकी ऐसी गैरजिम्मेदाराना और लापरवाह हरकतों की वजह से एक गैरभरोसेमंद देश के रूप में उसकी कैसी छवि बनेगी!

कल्पमेधा

जिन्होंने मनुष्य पर शासन की कला का अध्ययन किया,
उन्हें यह विश्वास है कि युवकों की शिक्षा
पर ही राज्य का भाग्य आधारित है।

– अरस्तू

कैसे मिलेगा सबको पानी

निरंकार सिंह

जल संकट वाले इलाकों में ऐसी फसलें लगाई जानी चाहिए जिसमें कम पानी की जरूरत पड़ती हो। यदि ऐसा नहीं किया गया तो इन क्षेत्रों में खेती के लिए पानी का संकट पैदा हो जाएगा। इसलिए हमें अपनी पीढ़ियों के भविष्य की चिंता खुद करनी होगी और हर कीमत पर पानी को बचाने के उपाय अभी से करना होगा।

हवा के बाद पानी जीवन की पहली जरूरत है। इसके बिना जीवन संभव नहीं है। लेकिन दुनिया में पीने वाले पानी की मात्रा लगातार घटती जा रही है। यह सिलसिला इसी तरह जारी रहा तो अगले बीस से तीस वर्षों के भीतर कई देशों के लिए अपनी आबादी के लिए अनाज पैदा करना बहुत मुश्किल हो जाएगा। पानी को लेकर विवाद कानून व्यवस्था के लिए चुनौती बन जाएगा। 1957 में प्रति व्यक्ति पानी की उपलब्धता पांच हजार एक सौ सतहत्तर क्यूबिक मीटर थी, जो अब घट कर एक हजार चार सौ से भी कम रह गई है। अस्सी फीसद पानी का उपयोग खेती में होता है और पंद्रह फीसद उद्योग-धंधों में लग जाता है। घरेलू उपयोग और पेयजल के लिए मुश्किल से पांच फीसद पानी बचता है। भारत जैसे देश में वर्षा की मात्रा प्रतिवर्ष अनियमित रहती है। साल में तीन-चार महीनों में ही सारी वर्षा हो जाती है। इस वजह से आबादी की खुराक के लिए जमीन पर बुरी तरह दबाव पड़ रहा है। इसलिए सरकार को जमीन की सतह के पानी का और सतह के नीचे के पानी का कृषि और उद्योग के बीच बड़ी सावधानी से बंटवारा करना पड़ेगा। अधिक पानी की अनिश्चित मात्रा के लिए ट्यूबवेल पर निर्भर करने से भी काम नहीं चलेगा। भारतीय मैदानों में जमीन के नीचे का पानी पहाड़ों से आने वाली भूगर्भ स्थित धाराओं से मिलता हो या स्थानीय वर्षा से आसपास की जमीन में जज्ब हुए पानी से मिलता हो, उस जमीन के नीचे के पानी की मात्रा सीमित है।

सरकार ने 2022 तक सबको नल से पेयजल मुहैया कराने का वादा किया है। यह लक्ष्य अत्यंत महत्त्वाकांक्षी है। पर सवाल है कि सबको पानी मिलेगा कैसे? क्योंकि 2030 तक चालीस फीसद आबादी के लिए पीने लायक पानी ही नहीं बचेगा। यह चेतावनी नीति आयोग ने अपनी हाल की रिपोर्ट में दी है। इसके अनुसार 2020 से ही पानी की परेशानी शुरू हो जाएगी। तब करीब दस करोड़ लोग पानी की उपलब्धता से वंचित हो जाएंगे। आयोग ने तीन साल पहले भी चेताया था कि देश में जल संरक्षण को लेकर अधिकांश राज्यों का काम अपेक्षानुरूप नहीं है। ऐसे में जल संकट बढ़ना लाजिमी है। दिल्ली का नब्बे फीसद भूमिगत जल का स्तर गंभीर स्थिति में पहुंच गया है। यहां के अलग-अलग क्षेत्रों में जलस्तर हर साल दो मीटर घट रहा है। दिल्ली का पंद्रह प्रतिशत क्षेत्र नाजुक स्थिति में है। यही हाल देश के प्रमुख महानगरों का भी होता जा रहा है।

नीति आयोग ने पिछले साल जारी रिपोर्ट में कहा था कि देश में करीब साठ करोड़ लोग पानी की गंभीर किल्लत का सामना कर रहे हैं। करीब दो लाख लोगों की मौत का कारण स्वच्छ जल न मिल पाना बताया गया है। भारत जल गुणवत्ता सूचकांक में एक सौ बाईस देशों में एक सौ बीसवें स्थान पर है। साल 2030 तक देश में पानी की मांग उपलब्ध जल वितरण की दोगुनी हो जाएगी। इसका मतलब है कि करोड़ों लोगों के लिए पानी का गंभीर संकट पैदा हो जाएगा। ऐसे में अब सरकार को इस पानी के संकट का दूरगामी हल खोजना होगा।

पानी के बारे में आर्थर एचकर्हरर्ट ने अपनी पुस्तक 'वाटर आर योर लाइफ' में कई महत्वपूर्ण जानकारियां दी हैं। आर्थर के अनुसार एक गैलन पेट्रोल बनाने में सात से दस गैलन तक पानी लगता है। एक टन नकली रेशम (रेयॉन) बनाने की प्रक्रिया में दो से तीन लाख गैलन पानी की जरूरत होती है। एक टन कृत्रिम रबर बनाने में इससे तिगुना पानी चाहिए। आधुनिक कागज के कारखानों में एक टन कागज बनाने के लिए पचास से साठ हजार गैलन पानी जरूरी होता है। दूसरे महायुद्ध के शुरू में संयुक्त राज्य अमेरिका में लगभग कागज के दो सौ कारखाने थे। एक टन साबुन तैयार करने में पांच सौ गैलन पानी लगता है। जब किसी हवाई जहाज के इंजन का परीक्षण किया जाता है तो उसे ठंडा करने के लिए पचास हजार से सवा लाख गैलन पानी लगता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के कैलीफोर्निया राज्य के लॉस एंजीलिस शहर ने अपने काम के लिए नलों द्वारा जमीन के भीतर का इतना पानी खींचा है कि

उसके आसपास की जमीन की सतह कई स्थानों पर आठ-आठ फुट तक नीचे बैठ गई है। इस राज्य के लोग बीच नामक क्षेत्र में जमीन के भीतर के पानी को खींचने से उसके जमीन के नीचे के पानी की सतह समुद्र की सतह से पचहत्तर फुट नीचे चली गई है और समुद्र तट के उस सारे भाग में कुओं का पानी खारा होने लगा है। 1939 में इन कुओं से पंप द्वारा रोज लगभग एक करोड़ गैलन पानी खींचा जा रहा था। दूसरे महायुद्ध ने उद्योग की मांग इतनी ज्यादा बढ़ा दी कि 1945 में ये कुएं दो करोड़ पच्चीस लाख गैलन पानी प्रति दिन मुहैया कर रहे थे। नतीजा यह हुआ कि वहां एक ट्यूबवेल में पानी का स्तर समुद्र की सतह से एक सौ दो फुट नीचे चला गया। एक और ट्यूबवेल ने जमीन से इतना अधिक पानी खींचा कि उसकी सतह समुद्र की सतह से एक सौ पैंसठ फुट नीची हो गई। परिणामस्वरूप भूमि के अंदर के पानी में समुद्र का पानी घुस जाने से वह खारा हो गया। उसी प्रदेश में स्वयं भूमि का स्तर हर साल औसतन 2.4 इंच तक नीचे धंसा, कुछ स्थलों पर धंसने की यह क्रिया डेढ़ फुट तक बढ़ गई। अन्य स्थानों में जैसे लुआविली, केंटकी आदि में जो समुद्र से बहुत दूर हैं और जहां युद्ध के कारण उद्योगों पर भारी दबाव पड़ा और ट्यूबवेल सूखने लगे।

यह अनुमान लगाया गया है कि दुनिया में 2000 से 2030 तक पानी की मांग इस हिसाब से चार से पांच गुनी बढ़ जाएगी। पानी का संकट कई देशों के अस्तित्व के लिए खतरा बन कर उभर रहा है। इससे उपजाऊ भूमि लगातार बंजर भूमि में बदलती जा रही है। अगले दस साल में कई देशों को अपनी आबादी के हिसाब से खाद्य पदार्थों का उत्पादन करना लगभग असंभव हो जाएगा। भारत में भी अगले कुछ वर्षों में पेयजल के साथ सिंचाई के पानी का भी संकट गहराने वाला है। नीति आयोग ने भी पानी के संकट को सबसे बड़ी चुनौती बताया है। उसने यह भी कहा है कि पंजाब और महाराष्ट्र जैसे राज्यों में धान एवं गन्ने की खेती में पानी की बर्बादी भी बहुत अधिक हो रही है। जल संकट वाले इलाकों में ऐसी फसलें लगाई जानी चाहिए जिसमें कम पानी की जरूरत पड़ती हो। यदि ऐसा नहीं किया गया तो इन क्षेत्रों में खेती के लिए पानी का संकट पैदा हो जाएगा। इसलिए हमें अपनी पीढ़ियों के भविष्य की चिंता खुद करनी होगी और हर कीमत पर पानी को बचाने के उपाय अभी से करना होगा। इसलिए अब हमारे पास वर्षा जल के संचय के अलावा कोई रास्ता नहीं बचा है। इसके लिए सारी मानव जाति को अभी से प्रयास करना होगा।

बहरहाल पानी के संकट से निपटने के लिए नीति आयोग ने देश की आधी करीब साढ़े चार सौ नदियों को आपस में जोड़ने का एक विस्तृत प्रस्ताव तैयार किया है। बरसात से या उसके बाद बहुत-सी नदियों का पानी समुद्र में जा गिरता है। अगर समय रहते इस पानी को उन नदियों में ले जाया जाए, जहां साल के अधिकतर महीनों में सूखा रहता है तो आसपास के क्षेत्रों में खेती हो सकती है।

मन की पगडंडी

पूनम पांडे

मन आमतौर पर मर्जी का मालिक होता है। लेकिन आजकल यह मन बाजार की अंगुलियों पर नाचने वाला जमूरा बन गया है। मन जो चाहता है, वह कर नहीं पाता, क्योंकि मन की चाह को कुछ लोग घूरने लगते हैं। मिसाल के तौर पर अगर मन यह चाहे कि चौराहे पर गोलगप्पे का आनंद लिया जाए तो उसे कुछ मानसिक विचार या परंपरा से मिले संस्कार रोक देते हैं। मसलन, कम से कम दस परिचित चेहरे उसी वक्त सामने से गुजर जा सकते हैं और इस तरह सरेआम पानी-पूरी चटकाते हुए देख कर मजाक बना सकते हैं, अपनी कोई राय या टिप्पणी देकर आपके गोलगप्पे के स्वाद को कड़वा बना दे सकते हैं। इसी तरह आपके पास कार हो, लेकिन आपका मन अगर चाहे कि आज स्थानीय तौर पर चलने वाली बस से बाजार जाया जाए और लोगों के बीच उतर कर सामूहिक होने का सुख लिया जाए, दुकानों पर जाकर जरूरी सामान लाया जाए, तो यहां पर फिर से इस फकीरी ठाठ पर कोई न कोई गांठ लग जाती है और मन मार कर खुद को अपनी कीमती गाड़ी पर सवार होकर अकेले ही बाजार से रूबरू होना पड़ता है।

कभी लगता है कि कथाओं में जो कृष्ण हमारे आसपास हैं, उनके बारे में जो कहानियां हैं, अगर वे कृष्ण भी यही करते और अपना मन मार कर घर के आंगन में सीमित रहते तो गाय, दूध, मक्खन आदि पर इतना कुछ कहां लिखा जाता! बाल लीला पर कुछ भी पढ़ने, सुनने, कहने लायक होता ही नहीं! फिर अगर उन लीलाओं को लिखने वालों ने जमाने का खयाल किया होता और लोक में मौजूद बातों से इतर अपनी कल्पनाशीलता को कलम से दर्ज नहीं किया होता तो ये कहानियां भी हमारे सामने कहां आ पातीं! यह जो आधुनिकता बनाम बाजारवाद का जानलेवा फंदा है, वह हमारी दिनचर्या के सरल सहज शब्दों में इतनी जटिलता पैदा कर रहा है कि हमारी अपनी मानसिक कल्पना को कमजोर ही करता जा रहा है।

दुनिया मेरे आगे

पिछले दिनों एक पड़ोसी बालक ने अपने घर पर खिल रहे सुंदर ताजे-ताजे फूलों और पत्तियों से बेहद कलात्मक बंदनवार बना कर सजाए जो सचमुच मनमोहक लग रहे थे। थोड़ी देर बाद वह अपने मित्र के घर गया जहां पर विदेशी फूलों की सजावट की गई थी। यह देख कर वह एकदम सदमे में आ गया। उसके बाद उसे अपने घर के बंदनवार बिल्कुल अच्छे नहीं लगे। उसका मन आहत हो गया था। यही है वह दिखावा जो बाजार पैदा कर रहा है पैसा कमाने के लिए, मगर बीमार हमारा मन हो रहा है।

यह जो मन है, वह बड़ी-बड़ी बातों पर नहीं टूटता, छोटी-छोटी बातों से चटक जाता है, मगर मन की खलबली और उधेड़बुन में मस्त होकर बहने वाले दुनिया में कई लोग ऐसे उदाहरण बन गए जो आज सबके लिए प्रेरणास्रोत हैं। उनको अपने अल्हड़ मन की अपनी भाषा से ऐसी चमक मिली कि उन संकेतों को अपने भीतर मथ-मथ कर वे बुद्धिमान कहलाए। मन की उस भाषा को प्रेमचंद ने सुना और कहानी सम्राट बन गए, मीरा ने सुना और अपने जीवन की तमाम सुविधाएं त्याग कर वृंदावन चली गईं। वह मीरा अपने पदों मे आज तक अमर हैं। कलाम ने बस अपने मन की सुनी और 'मिसाइल मैन' बने, फिर देश या दुनिया में एक जगह बना ली।

एक बार सोचिए कि दुनिया को बल्ब की रोशनी कैसे मिलती, अगर थामस अल्वा एडीसन अपने मन की मर्जी पर जीवन की अर्जी न लिख देते! जो जैसा चला आ रहा था, वे भी उसी में रमे रहते तो न वे कुछ नया कर पाते, न दुनिया को यह आविष्कार मिला होता। अपने मन की पगडंडी पर चलकर विवेकानंद ने अपनी संस्कृति और सभ्यता की अमिट छाप सारी दुनिया में छोड़ दी। समाज की विकृत यथास्थिति पर उन्होंने जो सवाल उठाए, वे विचार आज मानवता के लिए अनमोल हैं। कबीर के समकालीन ने उनके मन की आजादी को कहां आसानी से स्वीकार किया होगा, लेकिन कबीर अपने मन की सरगम में रमे रहे और आज वे सबके लिए प्रकाश स्तंभ हैं।

वह मन ही है जो निरा सपाट नहीं है, फिर भी उसको समझना काफी आसान है। मन इस उबड़-खाबड़ समाज में इतना कुछ होते हुए भी कहीं किसी सार्थक अर्थ से जोड़े रखता है। मगर कहीं न कहीं आडंबरी जीवन-शैली वाली करवट ने इसको आच्छादित कर लिया है। इसी फेर में हम अपने मन को मारने और दिखावे में जीने के आदी हो गए हैं। यदा-कदा इसको बाजार की पहेलीनुमा अधकचरे घोल से सजी सच्चाई दुविधा में डाल ही देती है। वरना नई पीढ़ी इतनी भटकी हुई नहीं होती। बाजार के षड्यंत्र से भरी बंधी-बंधाई चमकदार चौखट में कसने से बचना जरूरी है। जितनी जल्दी अपने मन के ध्वनि-संसार को समझ लिया जाए, उतना ही उत्तम।

नोटबंदी का हासिल

तीन साल पहले भारत सरकार ने पांच सौ और एक हजार रुपए के नोटों विमौद्रीकरण किया था। हालांकि नोटबंदी की इस कवायद का मुख्य उद्देश्य भ्रष्टाचार रोकना, नकली नोटों को निष्प्रभावी करना, दहशतगर्दी पर लगाम लगाना, कालाधन बाहर निकलना बताया गया था। इसलिए माना जा रहा था कि तमाम दिक्कतों के बावजूद नोटबंदी का फैसला देश हित में लिया गया। लेकिन दुख की बात है कि इनमें से एक भी मकसद पूरा नहीं हुआ और उल्टे सरकार के इस कदम से अर्थव्यवस्था चौपट होती चली गई। 31 मई, 2017 को केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय ने जो आंकड़े जारी किए थे, उनके अनुसार जीडीपी दर आठ प्रतिशत से गिर कर 7.1 फीसद पर पहुंच गई।

अर्थशास्त्रियों के मुताबिक मौजूदा आर्थिक सुस्ती के कई कारणों से में नोटबंदी भी एक बड़ी वजह रही है। हालांकि नोटबंदी के वजह से डिजिटल लेनदेन में शुरु में काफी तेजी देखी गई थी, लेकिन बाद में इसमें भी कमी आती गई। इतना ही नहीं, वर्ष 2018-19 में नकली नोटों में बढ़ोतरी दर्ज की गई। वर्ष 2016 में पांच सौ रुपए के जो नए नोट आए थे, उनके नकली नोटों में भी एक सौ इक्कीस फीसद की बढ़ोतरी दर्ज की गई। इसी तरह दो हजार रुपए मूल्य के नोटों में भी इक्कीस फीसद नकली नोटों का इजाफा हुआ। नोटबंदी के तीन वर्ष बीत जाने के बाद देश की अर्थव्यवस्था में नकली नोट की समस्या अब भी मौजूद हैं। नोटबंदी के बाद भी देश में आतंकवादी हमलों से जूझता रहा है। कालेधन की समस्या अभी भी पहले जैसी ही बनी हुई है। ऐसे में तो सवाल यही उठता है कि नोटबंदी से आखि फायदा क्या हुआ? बल्कि नोटबंदी से देश की आर्थिक विकास की रफ्तार धीमी पड़ गई है और उद्योग धंधे खासतौर से छोटे उद्योग बंद हो गए।

● *निशांत महेश त्रिपाठी, कोंढाली, नागपुर*

जिद की उलझन

महाराष्ट्र ही नहीं पूरा राष्ट्र भाजपा-शिवसेना की खटपट देख रहा है। मुख्यमंत्री पद को लेकर दोनों दल जिस तरह की बचकानी हठ पाले हुए हैं उससे सरकार बनना मुश्किल होता जा रहा है और राज्य में राष्ट्रपति शासन तक की नौबत आ गई है। गले-गले तक हुई बेरुखी से अगर बेमन से सरकार बन भी गई तो भी कामकाज में जोरदार टकराव आए दिन देखने को मिलेगा। साथ ही, मतदाताओं की नजर में भी इनकी छबि ठीक नहीं रहेगी। इसका फायदा राकांपा और कांग्रेस को आने वाले वक्त में जरूर मिलेगा। आपस में मामूली जिद से उभरी खटपट के कारण इन्हीं की कुल्हाड़ी इन्हीं के पांवों को घायल कर रही है। अब दोनों मिल कर सरकार बनाएं या राष्ट्रपति शासन लगे, या फिर एनसीपी-कांग्रेस और शिवसेना मिल कर भी सरकार का कर दें। हालांकि यह मुमकिन नहीं है फिर भी राजनीति में कभी भी कुछ भी संभव हो सकता है। अंत में एक कहावत भी चरितार्थ हो सकती है भाजपा-शिवसेना गठबंधन से कि 'हम तो डूबेंगे ही, तुमको भी भी ले डूबेंगे सनम'।

● *महेश नेनावा, इंदौर*

कब चेतेंगे हम

वायु प्रदूषण दिनोंदिन विकराल रूप धारण करता जा रहा है। हाल में दिल्ली सहित इसके आसपास के क्षेत्र बुरी तरह से प्रभावित हुए हैं और यह बदस्तूर जारी है। हाल में न्यूजीलैंड की संसद में पारित कार्बन उत्सर्जन में कटौती करने वाला जलवायु संबंधी विधेयक काफी महत्त्वपूर्ण है। यह न्यूजीलैंड सरकार की राजनीतिक प्रतिबद्धता के साथ साथ संवेदनशीलता को भी दर्शाता है। इससे भारत सहित दुनिया के उन तमाम देशों को सीख लेनी चाहिए जो कार्बन उत्सर्जन के लिए सिर्फ उत्सर्जन संबंधी कटौती सम्मेलन करके अपनी औपचारिकता पूरी कर लेते हैं। परंतु कार्बन उत्सर्जन पर कोई ठोस कदम नहीं उठाते हैं। अभी समय है कि इस गंभीर मुद्दे पर संवेदनशीलता के साथ साहसिक नीति बना कर उसे बेहतर रूप से क्रियान्वयन किया जाए, अन्यथा काफी देर हो जाएगी।

● *अरविंद पांडेय, सिद्धार्थनगर*

यह कैसा अन्याय

मध्यप्रदेश लोक सेवा आयोग ने हाल में जारी किसान कल्याण एवं कृषि विभाग भर्ती विज्ञापन में अनारक्षित एवं आरक्षित वर्ग के लिए परीक्षा फीस क्रमशः पांच सौ और ढाई सौ रुपए से पांच गुना बढ़ा कर क्रमशः ढाई हजार रुपए और साढ़े बारह सौ रुपए कर दी। परीक्षा फीस के नाम पर यह शिक्षित बेरोजगारों से खुली लूट है। आयोग परीक्षा फीस को कमाई का जरिया बना रहा है, जो सरासर गलत है। गौरतलब है कि शासन के ही सरकारी उपक्रमों या अन्य संस्थाओं द्वारा आयोजित किसी भी परीक्षा में इतनी अधिक फीस नहीं रहती है और प्रतिवर्ष आयोजित विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं में लाखों अभ्यर्थी रोजगार की आस में आवेदन करते हैं। दूसरी बात यह कि अनारक्षित और आरक्षित अभ्यर्थियों की फीस में इतना भारी अंतर भेदभाव को बढ़ाने वाला और वर्ग विशेष को फायदा पहुंचाने वाला है। इसे समाप्त करते हुए सबके लिए एकसमान फीस रखी जानी चाहिए। क्या अनारक्षित व्यक्ति गरीब नहीं हो सकता या क्या सभी आरक्षित व्यक्ति गरीब हैं? आरक्षण का लाभ केवल सुविधाओं और साधनों तक ही सीमित रखा जाना चाहिए। आखिर कब तक धर्म, जाति, वर्ग आधारित भेदभाव से देश की प्रतिभा का गला घोंटा जाता रहेगा?

● *मोहित सोनी, कुक्षी, धार*

शाकिब पर पाबंदी

बांग्लादेश क्रिकेट आज जिस मुकाम पर है, उसका श्रेय हरफनमौला खिलाड़ी शाकिब अल हसन को जाता है। पता नहीं अपने इस दायित्व को उन्होंने नहीं समझा या अतिउत्साह के कारण, 2018 में किसी भारतीय सट्टेबाज़ द्वारा उनसे किए गए संपर्क के बारे में आइसीसी को नहीं बताया। इसलिए उन पर एक साल का प्रतिबंध लगा दिया गया। उन पर मैच फिक्सिंग में शामिल होने का आरोप नहीं लगाया गया। वरना दूसरे बांग्लादेशी खिलाड़ी मोहम्मद अशरफुल की तरह पांच साल का प्रतिबंध लग सकता था। अगले एक साल शाकिब को कठिन दौर से गुजरना पड़ेगा। साथ में बांग्लादेशी टीम को भी उनकी कमी खलेगी। हम भारतीय दर्शक उन्हें अगले आइपीएल में खेलते हुए नहीं देख पाएंगे। सनराइजर्स हैदराबाद की टीम शाकिब के बिना अच्छा प्रदर्शन नहीं कर पाएगी। इतना होनहार खिलाड़ी ये गलती कैसे कर बैठा? यह विश्वास ही नहीं हो रहा है कि शाकिब ऐसी गलती भी कर सकते हैं।

● *जंग फबहादुर सिंह, जमशेदपुर*

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com